Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-5(A)| May-2026

Original Article

प्राचीन श्रमण परंपरा में स्त्री गरिमा: बौद्ध एवं जैन संघों के विशेष संदर्भ में एक तुलनात्मक ऐतिहासिक विश्लेषण

Dr. Madhulika Kumari
Assistant Professor, Department of History, Shri Davara University, Raipur, Chhattisgarh
Email: kmadhu409@gmail.com

Manuscript ID:
JRD -2026-180505
ISSN: 2230-9578
Volume 18
Issue 5(A)
Pp. 13-22
May- 2026
Submitted: 15 Apr. 2026
Revised: 25 Apr. 2026
Accepted: 10 May. 2026
Published: 31 May 2026

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र छठी शताब्दी ईसा पूर्व की सामाजिक-धार्मिक क्रांति के आलोक में बौद्ध एवं जैन धर्मों द्वारा स्थापित महिला संघों का एक तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। प्राचीन भारतीय इतिहास के उस कालखंड में, जहाँ सामाजिक संरचनाएं मुख्य रूप से पितृसत्तात्मक और ब्राह्मणवादी व्यवस्था से प्रभावित थीं, बौद्ध 'भिक्षुणी संघ' और जैन 'आर्यिका संघ' ने महिलाओं को एक स्वतंत्र धार्मिक एवं आध्यात्मिक मंच प्रदान किया।

इस शोध का मुख्य केंद्र बिंदु दोनों संघों की स्थापना, उनके संगठनात्मक ढांचे, और महिलाओं के लिए निर्धारित 'विनय' (नियमों) का तुलनात्मक अध्ययन करना है। जहाँ बौद्ध धर्म में बुद्ध ने महाप्रजापति गौतमी के आग्रह पर 'अष्ट गरूधम्म' की कठोर शर्तों के साथ भिक्षुणी संघ की अनुमति दी, वहीं जैन धर्म में भगवान महावीर के समय से ही 'चतुर्विध संघ' में आर्यिकाओं (साध्वियों) का महत्वपूर्ण स्थान रहा।

शोध पत्र के अंतर्गत 'थेरीगाथा' और जैन आगमों जैसे प्राथमिक स्रोतों के आधार पर यह विश्लेषण किया गया है कि इन संघों ने महिलाओं को न केवल मोक्ष या निर्वाण का मार्ग दिखाया, बल्कि उन्हें शिक्षा, नेतृत्व और सामाजिक बंधनों से मुक्ति का अवसर भी प्रदान किया। निष्कर्षतः, यह शोध स्पष्ट करता है कि कतिपय लैंगिक विषमताओं और कठोर अनुशासनिक नियमों के बावजूद, प्राचीन भारत में ये संघ महिला सशक्तिकरण के प्रथम संस्थागत प्रयास थे, जिन्होंने भारतीय संस्कृति और धार्मिक इतिहास पर अमिट छाप छोड़ी।

मुख्य शब्द : *भिक्षुणी संघ, आर्यिका संघ, श्रमण परंपरा, विनय, थेरीगाथा, प्राचीन भारत, महिला सशक्तिकरण।*

प्रस्तावना

प्राचीन भारतीय इतिहास का कालखंड, विशेषकर छठी शताब्दी ईसा पूर्व, वैचारिक क्रांति और सामाजिक-धार्मिक परिवर्तनों का युग रहा है। इस युग को 'श्रमण परंपरा' के उदय के रूप में चिन्हित किया जाता है, जिसने तत्कालीन वैदिक कर्मकांडों और वर्ण-आधारित सामाजिक स्तरीकरण को चुनौती दी। इस परिवर्तनकारी दौर में महिलाओं की धार्मिक और सामाजिक स्थिति में एक युगांतरकारी बदलाव आया, जब बौद्ध और जैन धर्मों ने महिलाओं के लिए संस्थागत 'संघ' के द्वार खोले।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं श्रमण परंपरा का उदय

उत्तर-वैदिक काल के अंत तक भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति में गिरावट आने लगी थी और उन्हें धार्मिक अनुष्ठानों व शिक्षा के उच्च केंद्रों से धीरे-धीरे वंचित किया जाने लगा था। जैसा कि Altekar (1956) ने उल्लेख किया है कि इस काल के दौरान महिलाओं की स्वतंत्रता सीमित हो गई थी और उनकी पहचान पारिवारिक भूमिकाओं तक सिमट कर रह गई थी। इसी पृष्ठभूमि में बुद्ध और महावीर के आंदोलनों ने आध्यात्मिक समानता का नारा बुलंद किया। श्रमण परंपरा ने यह प्रतिपादित किया कि मोक्ष या निर्वाण केवल पुरुषों का विशेषाधिकार नहीं है, बल्कि स्त्रियां भी अपनी साधना और त्याग के बल पर सर्वोच्च आध्यात्मिक पद प्राप्त कर सकती हैं।

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)
This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International Public License, which allows others to remix, tweak, and build upon the work noncommercially, as long as appropriate credit is given and the new creations ae licensed under the idential terms.

Address for correspondence:
Dr. Madhulika Kumari Assistant Professor, Department of History, Shri Davara University, Raipur, Chhattisgarh

How to cite this article:
Kumari, M. (2026). प्राचीन श्रमण परंपरा में स्त्री गरिमा: बौद्ध एवं जैन संघों के विशेष संदर्भ में एक तुलनात्मक ऐतिहासिक विश्लेषण. Journal of research & development, 18(5(A)), 13–22. https://doi.org/10.5281/zenodo.20918101

Quick Response Code:
Website: https://jrdrvb.org/
DOI: 10.5281/zenodo.20918101
OPEN ACCESS

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-5(A)| May-2026

बौद्ध 'भिक्षुणी संघ' का प्रादुर्भाव

बौद्ध धर्म में महिलाओं का संघ में प्रवेश एक लंबी प्रक्रिया और संघर्ष का परिणाम था। प्रारंभ में, गौतम बुद्ध महिलाओं को संघ में दीक्षित करने के पक्ष में नहीं थे, लेकिन अपनी माता महाप्रजापति गौतमी के हठ और अपने प्रिय शिष्य आनंद के तर्कपूर्ण हस्तक्षेप के बाद उन्होंने इसकी अनुमति दी। **Horner (1930)** के अनुसार, भिक्षुणी संघ की स्थापना बौद्ध धर्म के इतिहास में एक 'लोकतांत्रिक प्रयोग' जैसा था, जहाँ समाज के हर वर्ग की महिला—चाहे वह कुलीन हो, गणिका हो या निर्धन—निर्वाण की खोज में शामिल हो सकती थी। हालाँकि, बुद्ध ने संघ की सुरक्षा और सामाजिक मर्यादा का हवाला देते हुए 'अष्ट गरूधम्म' (Eight Heavy Rules) लागू किए, जो भिक्षुणियों को भिक्षु संघ के अधीन रखते थे।

जैन 'आर्यिका संघ' की निरंतरता

जैन धर्म में महिलाओं की स्थिति बौद्ध धर्म की तुलना में अधिक प्राचीन और सतत रही है। जैन परंपरा के अनुसार, प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के काल से ही महिलाओं का अपना एक संगठित संघ था। महावीर स्वामी के समय तक यह व्यवस्था और अधिक सुदृढ़ हुई। **Jaini (1991)** तर्क देते हैं कि जैन धर्म ने 'चतुर्विध संघ' (भिक्षु, भिक्षुणी, श्रावक, और श्राविका) की अवधारणा के माध्यम से महिलाओं को धर्म की मुख्यधारा का अभिन्न अंग माना। जैन ग्रंथों के अनुसार, महावीर के संघ में पुरुषों (14,000 भिक्षु) की तुलना में महिलाओं (36,000 आर्यिकाएं) की संख्या कहीं अधिक थी, जो महिलाओं की धार्मिक सक्रियता का प्रमाण है।

तुलनात्मक शोध की प्रासंगिकता

यद्यपि बौद्ध और जैन दोनों ही धर्मों ने महिलाओं को संन्यास (Renunciation) का अधिकार दिया, किंतु दोनों की वैचारिक और संगठनात्मक संरचनाओं में भिन्नता थी। जहाँ बौद्ध भिक्षुणी संघ 'थेरीगाथा' जैसे साहित्य के माध्यम से अपनी आंतरिक भावनाओं और स्वतंत्रता को अभिव्यक्त करता है, वहीं जैन आर्यिका संघ अपनी कठोर तपस्या और निरंतरता के लिए जाना जाता है। **Blackwell (2004)** के अनुसार, इन संघों ने पितृसत्तात्मक समाज के भीतर एक ऐसी 'समांतर दुनिया' का निर्माण किया, जहाँ महिलाओं का मूल्यांकन उनके परिवार या पति के आधार पर नहीं, बल्कि उनके ज्ञान और चरित्र के आधार पर किया जाता था।

शोध की समस्या और उद्देश्य

यह शोध पत्र इस प्रश्न का अन्वेषण करता है कि क्या ये संघ वास्तव में महिलाओं को पूर्ण स्वतंत्रता देने में सक्षम थे या ये तत्कालीन सामाजिक दबावों के कारण पितृसत्तात्मक नियंत्रण का ही एक सूक्ष्म रूप थे? इस शोध का उद्देश्य बौद्ध भिक्षुणी संघ और जैन आर्यिका संघ के नियमों, उनकी सामाजिक स्वीकार्यता और उनके पतन या निरंतरता के कारणों का तुलनात्मक ऐतिहासिक विश्लेषण करना है।

शोध की विधि

प्रस्तुत शोध पत्र 'प्राचीन भारतीय संघ व्यवस्था में महिलाओं की स्थिति' के विश्लेषण हेतु ऐतिहासिक शोध पद्धति का प्रयोग किया गया है। चूँकि यह विषय प्राचीन काल से संबंधित है, इसलिए इसमें प्राथमिक और द्वितीयक स्रोतों के तुलनात्मक एवं आलोचनात्मक विश्लेषण पर बल दिया गया है।

1. शोध का स्वरूप (Nature of Research)

यह शोध मुख्य रूप से गुणात्मक (Qualitative) और तुलनात्मक (Comparative) प्रकृति का है। इसमें बौद्ध और जैन धर्म के महिला संघों की संरचना और उनके सामाजिक प्रभाव का अध्ययन करने के लिए 'वर्णनात्मक-विश्लेषणात्मक' दृष्टिकोण अपनाया गया है। **Creswell (2014)** के अनुसार, गुणात्मक शोध शोधकर्ता को जटिल सामाजिक और ऐतिहासिक घटनाओं की गहराई से व्याख्या करने में सक्षम बनाता है।

2. डेटा संग्रह के स्रोत (Sources of Data Collection)

शोध की प्रामाणिकता हेतु डेटा को दो मुख्य श्रेणियों में विभाजित किया गया है:

क) प्राथमिक स्रोत (Primary Sources): ऐतिहासिक तथ्यों की पुष्टि के लिए मूल ग्रंथों का सहारा लिया गया है।

1. **बौद्ध संदर्भ:** त्रिपिटक के अंतर्गत 'विनय पिटक' (भिक्षुणियों के नियम) और 'सुत्त पिटक' के 'थेरीगाथा' (भिक्षुणियों के व्यक्तिगत अनुभव)। **Rhys Davids & Norman (1989)** ने माना है कि 'थेरीगाथा' प्राचीन विश्व के सबसे पुराने महिला साहित्य में से एक है।
2. **जैन संदर्भ:** जैन आगम साहित्य जैसे 'आचारांग सूत्र', 'कल्पसूत्र' और 'भगवती सूत्र'।

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-5(A)| May-2026

ख) द्वितीयक स्रोत (Secondary Sources): विषय की व्यापक समझ हेतु आधुनिक विद्वानों की पुस्तकों, शोध लेखों, और ऐतिहासिक पत्रिकाओं का उपयोग किया गया है। इसमें **Altekar (1956)**, **Horner (1930)**, और **Jaini (1991)** जैसे विशेषज्ञों के कार्यों को आधार बनाया गया है।

3. तुलनात्मक पद्धति (Comparative Method)

शोध में बौद्ध 'भिक्षुणी संघ' और जैन 'आर्यिका संघ' के बीच समानता और असमानता को स्पष्ट करने के लिए तुलनात्मक विधि का प्रयोग किया गया है। जैसा कि **Skocpol (1984)** ने ऐतिहासिक शोध में रेखांकित किया है, तुलनात्मक पद्धति के माध्यम से हम उन कारणों को समझ सकते हैं जिनसे एक ही कालखंड में दो अलग-अलग व्यवस्थाएं महिलाओं को अलग-अलग स्तर की स्वतंत्रता प्रदान कर रही थीं।

4. ऐतिहासिक विश्लेषण की प्रक्रिया (Process of Historical Analysis)

डेटा के विश्लेषण हेतु निम्नलिखित चरणों का पालन किया गया है:

1. **बाह्य आलोचना (External Criticism):** स्रोतों की प्राचीनता और लेखक की प्रामाणिकता की जाँच।
2. **आंतरिक आलोचना (Internal Criticism):** ग्रंथों में वर्णित घटनाओं और नियमों की तार्किकता का विश्लेषण।
3. **संश्लेषण (Synthesis):** बिखरे हुए तथ्यों को एकत्रित कर एक सुसंगत ऐतिहासिक चित्र प्रस्तुत करना।

शोध का क्षेत्र एवं सीमाएं (Scope and Delimitations)

यह शोध मुख्य रूप से छठी शताब्दी ईसा पूर्व से लेकर मौर्योत्तर काल (लगभग चौथी शताब्दी ईस्वी) तक सीमित है। भौगोलिक दृष्टि से इसका केंद्र मुख्य रूप से उत्तर और मध्य भारत की संघ व्यवस्थाएं हैं।

बौद्ध 'भिक्षुणी संघ': संरचना, नियम एवं आध्यात्मिक स्थिति

बौद्ध धर्म के इतिहास में 'भिक्षुणी संघ' की स्थापना एक युगांतरकारी घटना थी। यह न केवल धार्मिक सुधार था, बल्कि तत्कालीन पितृसत्तात्मक ढांचे के भीतर महिलाओं के लिए एक 'स्वायत्त स्थान' (Autonomous Space) का निर्माण भी था।

संघ की स्थापना का संघर्ष

बुद्ध के समय में महिलाओं को संघ में प्रवेश मिलना सहज नहीं था। **Horner (1930)** के अनुसार, बुद्ध प्रारंभ में महिलाओं को प्रव्रज्या (दीक्षा) देने के पक्ष में नहीं थे। इसके पीछे धार्मिक से अधिक सामाजिक और सुरक्षात्मक कारण थे।

1. **महाप्रजापति गौतमी का प्रयास:** बुद्ध की विमाता गौतमी ने 500 शाक्य महिलाओं के साथ मुंडित सिर और काषाय वस्त्र धारण कर कपिलवस्तु से वैशाली तक की पैदल यात्रा की।
2. **आनंद का हस्तक्षेप:** बुद्ध के प्रिय शिष्य आनंद ने तर्क दिया कि क्या स्त्रियां 'अर्हत्' पद प्राप्त करने में सक्षम नहीं हैं? बुद्ध ने स्वीकार किया कि स्त्रियां आध्यात्मिक रूप से पुरुषों के समान सक्षम हैं, जिसके बाद संघ के द्वार खुले।

अष्ट गरूधम्म (The Eight Heavy Rules)

संघ में प्रवेश की अनुमति के साथ ही बुद्ध ने भिक्षुणियों पर आठ विशेष कठोर नियम लागू किए, जिन्हें 'गरूधम्म' कहा जाता है। **Altekar (1956)** का तर्क है कि ये नियम भिक्षुणी संघ को भिक्षु संघ के अधीन रखने के लिए बनाए गए थे ताकि समाज में संघ की छवि मर्यादित बनी रहे।

प्रमुख गरूधम्म एक नज़र में:

1. **वरिष्ठता का नियम:** 100 वर्ष की दीक्षित भिक्षुणी को भी उसी दिन दीक्षित हुए भिक्षु का अभिवादन करना होगा।
2. **वर्षावास:** भिक्षुणियाँ ऐसे स्थान पर वर्षावास नहीं कर सकतीं जहाँ कोई भिक्षु न हो।
3. **पातिमोक्ख:** भिक्षुणियों को प्रत्येक पक्ष में भिक्षु संघ से उपदेश (ओवाद) प्राप्त करना होगा।
4. **अनुशासनिक कार्यवाही:** किसी भी गंभीर दोष की स्थिति में भिक्षुणी को दोनों संघों (भिक्षु और भिक्षुणी) के समक्ष प्रायश्चित करना होगा।

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-5(A)| May-2026

भिक्षुणी संघ की संगठनात्मक संरचना

भिक्षुणी संघ एक लोकतांत्रिक और व्यवस्थित इकाई थी। इसकी संरचना को निम्नलिखित चार्ट के माध्यम से समझा जा सकता है:

पद/श्रेणी	उत्तरदायित्व एवं स्थिति
सामनेरी (Samaneri)	दीक्षा की इच्छुक वह कन्या या महिला जो 10 शिक्षापदों का पालन करती थी।
सिक्खमाना (Sikkhamana)	दो वर्ष की परीक्षण अवधि वाली महिला, जो पूर्ण दीक्षा (उपसंपदा) की तैयारी करती थी।
भिक्षुणी (Bhikkhuni)	पूर्ण दीक्षित महिला जो 'पातिमोक्ख' के 311 नियमों का पालन करती थी।
थेरी (Theri)	वह वरिष्ठ भिक्षुणी जिसे आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त हो और जो कम से कम 10 वर्ष संघ में व्यतीत कर चुकी हो।

पातिमोक्ख और अनुशासन

बौद्ध विनय (Vinaya) के अनुसार, भिक्षुणियों के लिए नियमों की संख्या भिक्षुओं (227 नियम) की तुलना में कहीं अधिक (311 नियम) थी। **Blackwell (2004)** के अनुसार, नियमों की यह अधिकता भिक्षुणियों की सुरक्षा और उनके प्रति सामाजिक दृष्टिकोण को संतुलित करने का प्रयास थी।

थेरीगाथा: महिलाओं की आवाज़

भिक्षुणी संघ का सबसे गौरवशाली पक्ष 'थेरीगाथा' है। यह खुद्दक निकाय का एक हिस्सा है जिसमें 73 वरिष्ठ भिक्षुणियों (थेरियों) द्वारा रचित 522 छंद हैं।

1. **विषय वस्तु:** इसमें स्त्रियां अपनी घरेलू दासता, विलासिता, शोक और अंततः निर्वाण से प्राप्त शांति का वर्णन करती हैं।
2. **उद्धरण:** भिक्षुणी मुत्ता कहती हैं— *"हे मुत्ता! तुम तीन कुटिल वस्तुओं से मुक्त हो गई हो— मूसल से, चूल्हे से और अपने कुटिल पति से।"* यह उद्धरण संघ में प्रवेश को 'स्वतंत्रता' के रूप में परिभाषित करता है।

संघ की आंतरिक कार्यप्रणाली (Diagrammatic Representation)

संघ की कार्यप्रणाली 'ञत्ति' (Resolution) और 'कम्मवाचा' (Proceedings) पर आधारित थी। किसी भी निर्णय के लिए सभी सदस्यों की उपस्थिति अनिवार्य थी, जो प्राचीन भारत की लोकतांत्रिक परंपरा का प्रमाण है।

सामाजिक प्रभाव एवं चुनौतियाँ

भिक्षुणी संघ ने समाज के वंचित वर्गों (जैसे— दासी, विधवा, और गणिका) को गरिमापूर्ण जीवन दिया। **Ambedkar (1957)** के अनुसार, बुद्ध ने भिक्षुणी संघ की स्थापना करके महिलाओं के आध्यात्मिक और सामाजिक अधिकारों को पुनर्स्थापित किया था।

हालांकि, समाज में असुरक्षा, भिक्षुओं पर अत्यधिक निर्भरता और बाद के काल में राज्याश्रय की कमी के कारण भारत में भिक्षुणी संघ धीरे-धीरे क्षीण होता गया।

जैन 'आर्यिका संघ': ऐतिहासिकता, संरचना एवं वैचारिक दृष्टिकोण

जैन परंपरा के अनुसार, तीर्थंकरों ने समाज को चार भागों में विभाजित किया: श्रमण (मुनि), श्रमणी (आर्यिका), श्रावक (गृहस्थ पुरुष) और श्राविका (गृहस्थ महिला)। इस व्यवस्था में महिलाओं को प्रारंभ से ही पुरुषों के समान मोक्ष मार्ग का पथिक स्वीकार किया गया।

ऐतिहासिक जड़ें और तीर्थंकर महावीर का योगदान

जैन धर्म में महिला संघ की परंपरा प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के समय से ही मिलती है। **Jaini (1991)** के अनुसार, भगवान ऋषभदेव की प्रथम शिष्या 'ब्राह्मी' थीं, जिनके नाम पर ब्राह्मी लिपि का नामकरण हुआ।

महावीर स्वामी के काल में आर्यिका संघ ने अपना चरमोत्कर्ष प्राप्त किया। उनके संघ में प्रमुख गणधर 'चन्दनबाला' (चंदना) थीं, जिन्होंने 36,000 आर्यिकाओं के विशाल संघ का कुशल नेतृत्व किया। यह संख्या तत्कालीन बौद्ध भिक्षुणी संघ की तुलना में बहुत अधिक थी।

वैचारिक मतभेद: दिगंबर बनाम श्वेतांबर

जैन धर्म के दो प्रमुख संप्रदायों में महिलाओं की आध्यात्मिक मुक्ति (स्त्री-मुक्ति) को लेकर गहरा दार्शनिक मतभेद है, जो उनके संघों की प्रकृति को भी प्रभावित करता है:

1. **श्वेतांबर दृष्टिकोण:** इस संप्रदाय के अनुसार स्त्रियां उसी जन्म में मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त कर सकती हैं। 19वें तीर्थंकर 'मल्लिनाथ' को वे स्त्री (मल्लिकुमारी) मानते हैं।

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-5(A)| May-2026

2. **दिगंबर दृष्टिकोण:** दिगंबर परंपरा मानती है कि मोक्ष के लिए पूर्ण नग्नता अनिवार्य है, जो महिलाओं के लिए सामाजिक और शारीरिक रूप से संभव नहीं है। अतः, एक आर्यिका अपनी साधना से स्वर्ग या उत्तम पुरुष जन्म प्राप्त कर सकती है, जहाँ से वह अंततः मोक्ष पाएगी। **Shantaram (1956)** ने उल्लेख किया है कि दिगंबर परंपरा में आर्यिका को 'द्रव्य स्त्री' माना गया है जो भावों से मुनि के समान होती है।

आर्यिका संघ की श्रेणीबद्ध संरचना

आर्यिका संघ का संगठन अत्यंत अनुशासित था। इसे निम्नलिखित तालिका और आरेख के माध्यम से समझा जा सकता है:

पद/श्रेणी	योग्यता एवं भूमिका
गणिनी (Ganini)	संघ की सर्वोच्च प्रमुख। जो ज्ञान और चरित्र में वरिष्ठ हो और पूरे संघ का अनुशासन संभालती हो (जैसे चन्दनबाला)।
आर्यिका (Aryika)	पूर्ण दीक्षित साध्वी, जो महाव्रतों (अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह) का कठोरता से पालन करती है।
क्षुल्लिका (Kshullika)	दीक्षा की प्रारंभिक अवस्था, जो सीमित वस्त्र (साड़ी) धारण करती है और तप की ओर अग्रसर होती है।

जीवन शैली और महाव्रत

जैन आर्यिकाएं 'पंच महाव्रतों' का पालन करती हैं। बौद्ध भिक्षुणियों के विपरीत, जैन संघ में महिलाओं पर 'अष्ट गरूधम्म' जैसे अपमानजनक प्रतिबंध नहीं थे, हालांकि वे मुनि संघ के अनुशासन के प्रति आदर रखती थीं।

1. **वस्त्र:** आर्यिकाएं एक बिना सिला हुआ सफेद वस्त्र धारण करती हैं (दिगंबर परंपरा में भी)।
2. **साधना:** वे पैदल विहार, केशलोंच (हाथों से बाल उखाड़ना) और कड़े उपवास (बेला, तेला) जैसी कठिन तपस्याएं करती हैं।

तुलनात्मक रेखाचित्र: जैन संघ की स्वायत्तता

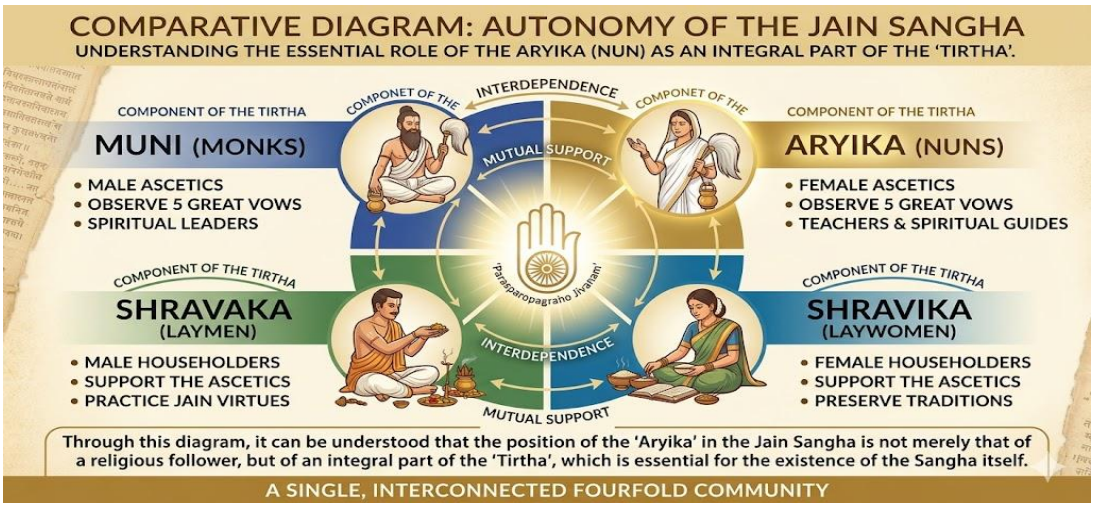

विवरण:

यह इन्फोग्राफिक स्पष्ट रूप से जैन धर्म के 'चतुर्विध संघ' (चार प्रकार का संघ) के बीच के संतुलित और अन्योन्याश्रित संबंधों को दर्शाता है:

1. **मुनि (Monks) और आर्यिका (Nuns):** ये आध्यात्मिक नेता और शिक्षक हैं जो पंच महाव्रतों का पालन करते हैं। वे ज्ञान और साधना का प्रतिनिधित्व करते हैं।
2. **श्रावक (Laymen) और श्राविका (Laywomen):** ये गृहस्थ सदस्य हैं जो संयम के साथ धर्म का पालन करते हैं और संन्यासी समुदाय की आवश्यकताओं (जैसे आहार और आवास) का ध्यान रखते हैं। वे संघ के भौतिक आधार का प्रतिनिधित्व करते हैं।

इस आरेख के केंद्र में और सभी घटकों के चारों ओर के तीर यह दर्शाते हैं कि ये चारों इकाइयाँ 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्' (जीवों का परस्पर उपकार) के सिद्धांत के तहत एक-दूसरे पर निर्भर और एक-दूसरे की सहायक हैं। इनमें से प्रत्येक घटक 'तीर्थ' का एक अनिवार्य हिस्सा है, जिसके बिना जैन संघ का अस्तित्व अधूरा है।

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-5(A)| May-2026

इस चित्र के माध्यम से समझा जा सकता है कि जैन संघ में 'आर्यिका' का स्थान केवल एक धार्मिक अनुयायी का नहीं, बल्कि 'तीर्थ' के एक भाग का है, जो संघ के अस्तित्व के लिए अनिवार्य है।

सामाजिक प्रभाव और साहित्यिक योगदान

आर्यिकाओं ने न केवल धर्म का प्रचार किया बल्कि शिक्षा और साहित्य में भी योगदान दिया। **Altekar (1956)** के अनुसार, जैन साध्वियां प्रायः उच्च शिक्षित होती थीं और वे श्राविकाओं (गृहस्थ महिलाओं) के लिए प्राथमिक शिक्षिका की भूमिका निभाती थीं। राजस्थान, गुजरात और कर्नाटक के शिलालेखों में आर्यिकाओं को दिए गए दानों और उनके द्वारा निर्मित मंदिरों के प्रमाण मिलते हैं, जो उनकी सामाजिक शक्ति को दर्शाते हैं।

जैन आर्यिका संघ की सबसे बड़ी विशेषता इसकी 'निरंतरता' (Continuity) रही है। जहाँ भारत में बौद्ध भिक्षुणी संघ मध्यकाल तक लगभग विलुप्त हो गया था, वहीं जैन आर्यिका संघ आज भी भारत में सक्रिय है और अपने प्राचीन स्वरूप को बनाए हुए है।

बौद्ध एवं जैन महिला संघों का तुलनात्मक विश्लेषण

बौद्ध 'भिक्षुणी संघ' और जैन 'आर्यिका संघ' दोनों ने भारतीय इतिहास में पहली बार महिलाओं को संस्थागत रूप से संन्यास का अधिकार दिया। फिर भी, उनकी दार्शनिक पृष्ठभूमि और अनुशासनिक संरचना में स्पष्ट अंतर विद्यमान थे।

दार्शनिक आधार एवं मुक्ति (Salvation) की अवधारणा

दोनों धर्मों में महिलाओं की आध्यात्मिक क्षमता को लेकर अलग-अलग दृष्टिकोण थे।

1. **बौद्ध मत:** बुद्ध ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि स्त्रियाँ 'अर्हत्' (ज्ञान प्राप्ति की सर्वोच्च अवस्था) बन सकती हैं। **Horner (1930)** के अनुसार, बौद्ध धर्म ने महिलाओं को जैविक पहचान से ऊपर उठकर 'निर्वाण' के योग्य माना।
2. **जैन मत:** यहाँ स्थिति संप्रदायों के कारण जटिल थी। श्वेतांबर जैनों ने महिलाओं की मुक्ति को उसी जन्म में संभव माना, जबकि दिगंबर संप्रदाय ने शारीरिक सीमाओं और नग्नता की अनिवार्यता के कारण महिलाओं को पुरुष जन्म के बाद ही मोक्ष का पात्र माना (**Jaini, 1991**)।

संगठनात्मक स्वायत्तता बनाम अधीनता

संघ के भीतर महिलाओं की स्वतंत्रता के स्तर में बड़ा अंतर था:

1. **अष्ट गरूधम्म का प्रभाव:** बौद्ध भिक्षुणियों को आठ अत्यंत कठोर नियमों (Garudhammas) का पालन करना पड़ता था, जो उन्हें सदैव भिक्षु संघ के प्रति जवाबदेह और अधीन रखते थे। **Altekar (1956)** इसे पितृसत्तात्मक समाज के साथ किया गया एक 'समझौता' मानते हैं।
2. **चतुर्विध संघ की समानता:** जैन धर्म में 'आर्यिका' को 'तीर्थ' का एक अभिन्न अंग माना गया। यद्यपि वे मुनियों का सम्मान करती थीं, लेकिन उन पर बौद्ध धर्म जैसे अपमानजनक पदानुक्रमित नियम नहीं थे।

तुलनात्मक तालिका: एक संक्षिप्त अवलोकन

तुलना के बिंदु	बौद्ध 'भिक्षुणी संघ'	जैन 'आर्यिका संघ'
प्रवेश पूर्व परीक्षण	2 वर्ष की 'सिक्खमाना' अवधि अनिवार्य।	कोई निश्चित समय सीमा नहीं, योग्यता प्रधान।
नियमों की संख्या	311 (विनय पिटक के अनुसार)।	मुनियों के समान 5 महाव्रत एवं अतिरिक्त गुण।
नेतृत्व	भिक्षु संघ के मार्गदर्शन में कार्य।	'गणिनी' के रूप में स्वतंत्र महिला नेतृत्व।
वस्त्र विधान	तीन काषाय वस्त्र (Civara)।	एक अखंड श्वेत वस्त्र (साड़ी)।
साहित्यिक साक्ष्य	'थेरीगाथा' (भावनात्मक और काव्यात्मक)।	आगम एवं शिलालेख (ऐतिहासिक और दार्शनिक)।

सामाजिक स्वीकार्यता और भिक्षावृत्ति

दोनों संघों की सामाजिक स्वीकार्यता उनके भिक्षा के नियमों पर निर्भर थी। बौद्ध भिक्षुणियाँ पके हुए भोजन की भिक्षा लेती थीं और समाज के साथ उनका संवाद अधिक था। इसके विपरीत, जैन आर्यिकाएं 'गोचरी' (भिक्षा) के अत्यंत कठोर नियमों का पालन करती थीं (जैसे खड़े होकर भोजन करना या केवल एक बार भोजन)। **Shantaram (1956)** का तर्क है कि जैन संघ की अत्यधिक कठोरता ने ही उसे बाहरी आक्रमणों के बावजूद भारत में जीवित रखने में मदद की।

ऐतिहासिक निरंतरता (Historical Continuity)

यह एक शोध का विषय है कि बौद्ध भिक्षुणी संघ भारत से लगभग विलुप्त हो गया, जबकि जैन आर्यिका संघ आज भी अखंड रूप से विद्यमान है।

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-5(A)| May-2026

कारण: बौद्ध संघ को राजकीय संरक्षण (जैसे अशोक) अधिक मिला, जिससे वह राज्य की अस्थिरता के साथ कमजोर हुआ। जैन संघ 'श्रावक-श्राविका' (गृहस्थों) के साथ इतना मजबूती से जुड़ा था कि वह सामाजिक स्तर पर कभी खत्म नहीं हुआ (**Blackwell, 2004**)। विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि बौद्ध संघ ने महिलाओं को वैचारिक और साहित्यिक स्वतंत्रता अधिक दी (जैसा कि 'थेरीगाथा' के विद्रोह से झलकता है), लेकिन जैन संघ ने महिलाओं को संस्थागत स्थिरता और सम्मान अधिक प्रदान किया, जिसके कारण उनकी परंपरा आज भी जीवंत है।

सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव

बौद्ध 'भिक्षुणी संघ' और जैन 'आर्यिका संघ' की स्थापना मात्र एक धार्मिक घटना नहीं थी, बल्कि यह पितृसत्तात्मक समाज के विरुद्ध एक 'मौन क्रांति' थी। इन संघों ने तत्कालीन सामाजिक मानदंडों को पुनः परिभाषित किया।

पितृसत्तात्मक ढांचे को चुनौती और स्वायत्तता

प्राचीन भारतीय समाज में स्त्री की पहचान पुरुष (पिता, पति या पुत्र) के संदर्भ में ही परिभाषित थी। **Altekar (1956)** के अनुसार, संघ ने महिलाओं को पहली बार एक 'स्वतंत्र विधिक और धार्मिक व्यक्तित्व' (Independent Legal and Religious Identity) प्रदान किया।

1. **गृहत्याग का अधिकार:** संघ में प्रवेश का अर्थ था— घरेलू दासता, चूल्हे-चौके और संतानोत्पत्ति के अनिवार्य सामाजिक दायित्वों से मुक्ति।
2. **थेरीगाथा का साक्ष्य:** जैसा कि 'थेरीगाथा' में भिक्षुणी मुत्ता कहती हैं कि संघ ने उन्हें 'तीन कुटिल चीजों' (मूसल, चूल्हा और पति) से मुक्त कर दिया। यह सामाजिक बंधनों के विरुद्ध स्पष्ट विद्रोह था।

शिक्षा और बौद्धिक विकास

संघ केवल प्रार्थना के केंद्र नहीं थे, बल्कि वे उच्च शिक्षा के संस्थान भी थे।

1. **साक्षरता और नेतृत्व:** बौद्ध और जैन साध्वियाँ दर्शन, तर्कशास्त्र और व्याकरण में पारंगत थीं। **Horner (1930)** ने उल्लेख किया है कि कई भिक्षुणियाँ 'धम्मदेसक' (धर्म की व्याख्या करने वाली) थीं, जो पुरुषों को भी उपदेश देती थीं।
2. **साहित्यिक सृजन:** 'थेरीगाथा' को विश्व साहित्य में महिलाओं द्वारा रचित प्रथम काव्य संग्रह माना जा सकता है। इसी प्रकार, जैन परंपरा में 'गणिनी' का पद यह सिद्ध करता है कि महिलाएं प्रशासनिक और शैक्षणिक नेतृत्व करने में सक्षम थीं।

सामाजिक समावेशिता (Social Inclusivity)

इन संघों ने वर्ण व्यवस्था की कठोरता को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

1. **वर्गहीन समाज:** संघ के भीतर राजकुमारी (जैसे क्षेमा), गणिका (जैसे आम्रपाली), और दासी (जैसे पुण्णा) सभी एक समान श्रेणी में रहती थीं। **Ambedkar (1957)** ने तर्क दिया है कि बुद्ध ने संघ के माध्यम से सामाजिक लोकतंत्र की नींव रखी थी, जहाँ जन्म के स्थान पर 'शील' (चरित्र) को महत्व दिया गया।
2. **पुनर्वास:** विधवाओं और समाज द्वारा परित्यक्त महिलाओं के लिए ये संघ एक सुरक्षित 'शरणस्थली' (Refuge) के रूप में उभरे।

कला, वास्तुकला और दान की संस्कृति

इन संघों का सांस्कृतिक प्रभाव तत्कालीन कला पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

1. **अभिलेखीय साक्ष्य:** सांची, भरहुत और कार्ले की गुफाओं में मिले दानदाता अभिलेखों (Donative Inscriptions) में बड़ी संख्या में भिक्षुणियों और श्राविकाओं के नाम दर्ज हैं। **Blackwell (2004)** के अनुसार, यह दर्शाता है कि महिलाओं के पास निजी संपत्ति या संसाधन थे जिन्हें वे धार्मिक कार्यों में अपनी इच्छानुसार दान कर सकती थीं।
2. **कला में चित्रण:** अजंता की गुफाओं और अमरावती के स्तूपों में भिक्षुणियों को उपदेश देते और धार्मिक जुलूसों का नेतृत्व करते हुए दिखाया गया है, जो उनकी उच्च सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रमाण है।

सांस्कृतिक निरंतरता और वैश्विक प्रसार

1. **बौद्ध धर्म:** सम्राट अशोक की पुत्री संघमित्रा द्वारा श्रीलंका में भिक्षुणी संघ की शाखा ले जाना एक ऐतिहासिक सांस्कृतिक कृत्य था, जिसने दक्षिण-पूर्व एशिया में भारतीय संस्कृति और महिला नेतृत्व के मॉडल को स्थापित किया।
2. **जैन धर्म:** जैन आर्यिकाओं ने स्थानीय भाषाओं (प्राकृत, अपभ्रंश, पुरानी कन्नड़) के संरक्षण और प्रसार में योगदान दिया, जिससे क्षेत्रीय संस्कृतियों का विकास हुआ।

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-5(A)| May-2026

सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से, इन संघों ने 'स्त्री' को केवल एक 'भोग्या' या 'माता' के रूप में देखने के नजरिए को बदला और उन्हें 'साधिका' व 'विदुषी' के रूप में प्रतिष्ठित किया। यद्यपि समाज पूर्णतः नहीं बदला, किंतु इन संस्थाओं ने भविष्य के महिला आंदोलनों के लिए एक ऐतिहासिक आधार तैयार कर दिया।

चुनौतियाँ एवं पतन के कारण

बौद्ध और जैन महिला संघों का इतिहास केवल उपलब्धियों का नहीं, बल्कि निरंतर संघर्ष का भी रहा है। जहाँ जैन 'आर्यिका संघ' अपनी कठोरता के कारण अस्तित्व बचाए रखने में सफल रहा, वहीं बौद्ध 'भिक्षुणी संघ' को भारत में पतन का सामना करना पड़ा।

आंतरिक चुनौतियाँ और भेदभावपूर्ण नियम

संघों के भीतर व्याप्त कुछ नियम महिलाओं के लिए मनोवैज्ञानिक और प्रशासनिक बाधा बन गए थे।

1. **पदानुक्रमित असमानता:** बौद्ध धर्म में 'अष्ट गरूधम्म' ने भिक्षुणियों को हमेशा भिक्षुओं के अधीन रखा। **Altekar (1956)** के अनुसार, "एक सौ वर्ष की दीक्षित भिक्षुणी को भी एक नव-दीक्षित भिक्षु का अभिवादन करना अनिवार्य था," जिससे संघ के भीतर योग्यता के स्थान पर लैंगिक श्रेष्ठता को बल मिला।
2. **दिगंबर-श्वेतांबर विवाद:** जैन धर्म में दिगंबर संप्रदाय द्वारा स्त्रियों की 'साक्षात् मोक्ष' की अक्षमता के सिद्धांत ने आर्यिकाओं की आध्यात्मिक स्थिति को मुनियों की तुलना में दोयम दर्जे का बना दिया (**Jaini, 1991**)।

सुरक्षा और सामाजिक पूर्वाग्रह

प्राचीन भारत में सन्यासिनियों की सुरक्षा एक बड़ी चुनौती थी।

1. **असुरक्षा का भय:** भिक्षुणियों को अकेले विहार करने की अनुमति नहीं थी। चोरी और दुर्व्यवहार की घटनाओं के कारण संघों को अक्सर बस्तियों के निकट रहना पड़ता था, जिससे उनकी एकांत साधना बाधित होती थी।
2. **सामाजिक कलंक:** यदि कोई भिक्षुणी किसी कारणवश संघ छोड़ती थी या गर्भवती हो जाती थी, तो समाज उसे अत्यंत हीन दृष्टि से देखता था, जबकि पुरुषों के मामले में समाज इतना कठोर नहीं था (**Horner, 1930**)।

राजकीय संरक्षण में कमी और बाह्य आक्रमण

1. **राजकीय उपेक्षा:** गुप्त काल के बाद, जब ब्राह्मणवादी व्यवस्था का पुनरुत्थान हुआ, तो बौद्ध और जैन संघों को मिलने वाले राजकीय दान में कमी आई। **Thapar (2003)** के अनुसार, हिंदू धर्म के सुधार आंदोलनों (जैसे भक्ति मार्ग) ने महिलाओं को घर में रहकर ही धार्मिक संतुष्टि का विकल्प दे दिया, जिससे संघों की ओर आकर्षण कम हुआ।
2. **विदेशी आक्रमण:** 10वीं-12वीं शताब्दी के दौरान मध्य एशियाई आक्रमणों ने नालंदा और विक्रमशिला जैसे केंद्रों को नष्ट कर दिया। भिक्षुणी संघ, जो पहले से ही कमजोर था, इन झटकों को सहन नहीं कर सका और भारत से लगभग विलुप्त हो गया।

जैन संघ की उत्तरजीविता (Survival) बनाम बौद्ध पतन

यह एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक प्रश्न है कि जैन आर्यिका संघ आज भी भारत में क्यों है?

1. **श्रावक समुदाय से जुड़ाव:** जैन धर्म का संगठन 'चतुर्विध' (मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका) था। आर्यिकाएं गृहस्थ महिलाओं (श्राविकाओं) के साथ गहराई से जुड़ी थीं, जिससे उन्हें निरंतर भोजन और सुरक्षा मिलती रही।
2. **कठोर अनुशासन:** जैन संघ ने अपने नियमों में कोई लचीलापन नहीं आने दिया, जबकि बौद्ध संघ के कुछ हिस्सों में शिथिलता आने से उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा गिरी (**Blackwell, 2004**)।

चुनौतियों का तुलनात्मक प्रवाह चित्र (Flowchart)

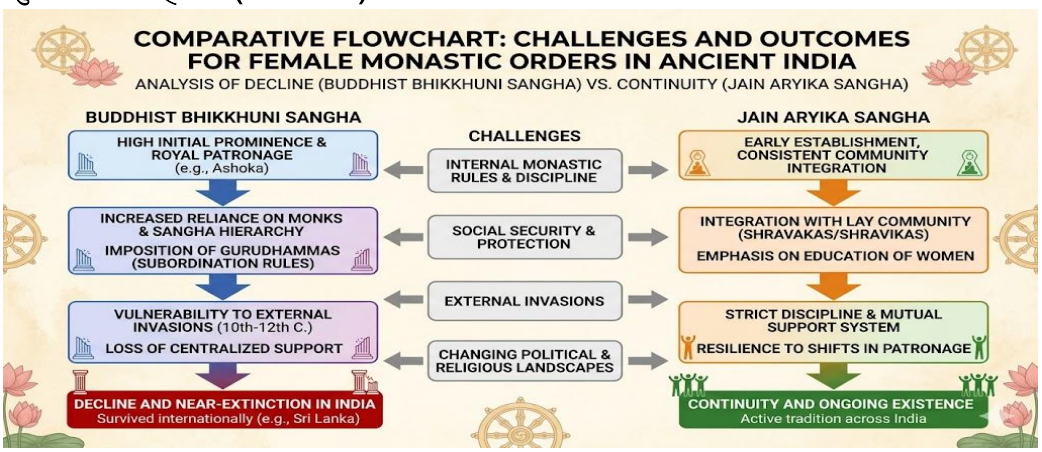

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-5(A)| May-2026

विवरण:
यह इन्फोग्राफिक बौद्ध और जैन महिला आदेशों के बीच चुनौतियों और परिणामों का एक स्पष्ट तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है।
बाएं तरफ (बौद्ध):

1. **शुरुआत:** उच्च प्रारंभिक प्रमुखता और शाही संरक्षण (जैसे, अशोक)।
2. **चुनौतियाँ:** भिक्षुओं और संघ पदानुक्रम पर निर्भरता; 'अष्ट गरूधम्म' (अधीनता के नियम) लागू होना।
3. **परिणाम:** बाहरी आक्रमणों (10वीं-12वीं शताब्दी) और केंद्रीकृत समर्थन के नुकसान के कारण असुरक्षा।
4. **अंतिम परिणाम:** भारत में पतन और लगभग विलुप्ति, लेकिन अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जीवित रहना (जैसे, श्रीलंका)।

दाएं तरफ (जैन):

1. **शुरुआत:** प्रारंभिक स्थापना और निरंतर सामुदायिक एकीकरण।
2. **चुनौतियाँ:** गृहस्थ समुदाय ('श्रावक/श्राविका') के साथ एकीकरण; महिलाओं की शिक्षा पर जोर।
3. **परिणाम:** सख्त अनुशासन और पारस्परिक समर्थन प्रणाली; संरक्षण में बदलाव के प्रति लचीलापन।
4. **अंतिम परिणाम:** निरंतरता और चल रहा अस्तित्व; पूरे भारत में सक्रिय परंपरा।

इस प्रवाह चित्र के केंद्र में सामान्य चुनौतियों (मोनैस्टिक नियम, सामाजिक सुरक्षा, बाहरी आक्रमण, और बदलते परिदृश्य) को रेखांकित किया गया है, जो यह स्पष्ट करता है कि आंतरिक और सामाजिक कारक किसी भी संस्था के अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। पतन के कारणों का विश्लेषण यह दर्शाता है कि बाह्य आक्रमणों से अधिक 'आंतरिक पितृसत्ता' और 'सामाजिक असुरक्षा' ने इन महिला संघों को नुकसान पहुँचाया। बौद्ध भिक्षुणी संघ अपनी अंतरराष्ट्रीय शाखाओं (श्रीलंका, चीन) में तो जीवित रहा, परंतु अपनी जन्मभूमि भारत में वह सामाजिक और राजनीतिक उपेक्षा की भेंट चढ़ गया

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध पत्र 'प्राचीन भारतीय संघ व्यवस्था में महिलाओं की स्थिति: बौद्ध 'भिक्षुणी संघ' एवं जैन 'आर्यिका संघ' का एक तुलनात्मक ऐतिहासिक शोध' का उद्देश्य छठी शताब्दी ईसा पूर्व से लेकर मध्यकाल तक इन दो श्रमण परंपराओं के महिला संघों के विकास, नियमों, सामाजिक प्रभाव और उनकी वर्तमान स्थिति का विश्लेषण करना था। प्राथमिक बौद्ध विनय ग्रंथों, 'थेरीगाथा' और जैन आगमों के साथ-साथ द्वितीयक ऐतिहासिक स्रोतों के व्यापक अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त होते हैं:

धार्मिक समानता और संस्थागत अभिनवीकरण

1. **प्रमुख निष्कर्ष:** बौद्ध और जैन दोनों धर्मों ने तत्कालीन ब्राह्मणवादी व्यवस्था के लैंगिक भेदभाव को वैचारिक रूप से चुनौती दी। **Altekar (1956)** ने सही कहा है कि "इन धर्मों ने महिलाओं को मोक्ष या निर्वाण का अधिकारी मानकर एक क्रांतिकारी कदम उठाया।"
2. संघों की स्थापना करके उन्होंने पितृसत्तात्मक ढांचे के भीतर महिलाओं के लिए पहली बार एक 'स्वायत्त सामाजिक और धार्मिक स्थान' (Autonomous Social and Religious Space) का निर्माण किया।

तुलनात्मक नियम और स्वतंत्रता का स्तर

1. **बौद्ध संघ:** यद्यपि बुद्ध ने महिलाओं की आध्यात्मिक क्षमता को स्वीकारा, लेकिन भिक्षुणी संघ की अनुमति 'अष्ट गरूधम्म' की कठोर शर्तों के साथ दी, जिसने भिक्षुणियों को भिक्षु संघ के अधीन रखा। **Horner (1930)** के अनुसार, नियमों की अधिकता सुरक्षात्मक होने के साथ-साथ पितृसत्तात्मक नियंत्रण का भी एक सूक्ष्म रूप थी।
2. **जैन संघ:** जैन परंपरा में महिलाओं की स्थिति अधिक सतत और संगठनात्मक रूप से संतुलित थी। 'आर्यिका' को 'तीर्थ' का एक अनिवार्य हिस्सा माना गया। दिगंबर-श्वेतांबर वैचारिक मतभेदों के बावजूद, जैन संघ में बौद्ध गरूधम्म जैसे अपमानजनक नियम नहीं थे।

सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभाव और सशक्तिकरण

1. इन संघों ने सामाजिक समावेशिता को बढ़ावा दिया, जहाँ राजकुमारी, दासी, गणिका, और विधवा सभी एक ही श्रेणी में समानता के साथ रहती थीं। **Ambedkar (1957)** ने माना कि बुद्ध ने संघ के माध्यम से सामाजिक लोकतंत्र की नींव रखी।
2. **शैक्षणिक विकास:** संघ शिक्षा के केंद्र बने और 'थेरीगाथा' जैसा साहित्यिक सृजन यह सिद्ध करता है कि महिलाओं को बौद्धिक स्वतंत्रता प्राप्त थी।

उत्तरजीविता बनाम पतन के कारण (The Paradox of Decline)

1. **महत्वपूर्ण निष्कर्ष:** शोध का एक प्रमुख निष्कर्ष यह है कि भारत में बौद्ध भिक्षुणी संघ लगभग विलुप्त हो गया, जबकि जैन आर्यिका संघ आज भी सक्रिय है।

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-5(A)| May-2026

2. **कारण:** बौद्ध संघ राजकीय संरक्षण (जैसे अशोक) पर अधिक निर्भर था और विदेशी आक्रमणों ने इसके केंद्रीकृत ढांचे को नष्ट कर दिया। इसके विपरीत, जैन संघ गृहस्थ समुदाय ('श्रावक-श्राविका') के साथ गहराई से एकीकृत था और इसके कठोर अनुशासन ने इसे बदलते राजनीतिक व सामाजिक परिदृश्यों में बचाए रखा (**Blackwell, 2004**)।

निष्कर्षतः, प्राचीन भारतीय संघ व्यवस्था में बौद्ध 'भिक्षुणी संघ' और जैन 'आर्यिका संघ' महिलाओं के आध्यात्मिक और सामाजिक सशक्तिकरण के पहले ऐतिहासिक और संस्थागत उदाहरण थे। यद्यपि वे तत्कालीन पितृसत्तात्मक समाज के पूर्वाग्रहों से पूरी तरह मुक्त नहीं थे, फिर भी उन्होंने एक ऐसा मंच तैयार किया जहाँ महिलाओं ने अपनी जैविक पहचान से ऊपर उठकर अपनी 'विदुषी' और 'साधिका' की पहचान स्थापित की

संदर्भ सूची (References)

1. **Altekar, A. S. (1956).** *The Position of Women in Hindu Civilization: From Prehistoric Times to the Present Day* (2nd ed.). Motilal Banarsidass. [pp. 203–215: संन्यास और संघों में महिलाओं की स्थिति का विश्लेषण]।
2. **Ambedkar, B. R. (1957).** *The Buddha and His Dhamma*. Siddharth Publication. [pp. 110–125: भिक्षुणी संघ की स्थापना और सामाजिक न्याय का सिद्धांत]।
3. **Blackwell, F. (2004).** *India: A Global Studies Handbook*. ABC-CLIO. [pp. 88–92: प्राचीन भारत में धार्मिक आंदोलनों का सामाजिक प्रभाव]।
4. **Creswell, J. W. (2014).** *Research Design: Qualitative, Quantitative, and Mixed Methods Approaches* (4th ed.). SAGE Publications. [pp. 183–210: ऐतिहासिक और गुणात्मक शोध की प्रवृत्तियाँ]।
5. **Horner, I. B. (1930).** *Women Under Primitive Buddhism: Laywomen and Almswomen*. Routledge. [pp. 118–161: भिक्षुणी संघ के नियम और अष्ट गरूधम्म की व्याख्या]।
6. **Jaini, P. S. (1991).** *Gender and Salvation: Jaina Debates on the Spiritual Liberation of Women*. University of California Press. [pp. 20–45: दिगंबर और श्वेतांबर परंपरा में स्त्री-मुक्ति का विवाद]।
7. **Rhys Davids, C. A. F., & Norman, K. R. (1989).** *Poems of Early Buddhist Nuns (Therigatha)*. Pali Text Society. [pp. 1–15: थेरियों के आध्यात्मिक अनुभव और काव्य]।
8. **Shah, K. J. (1987).** *Women in Jainism*. Heritage Publishers. [pp. 55–70: जैन आर्यिकाओं की संगठनात्मक भूमिका]।
9. **Shantaram, B. D. (1956).** *History of Jaina Monasticism*. Deccan College. [pp. 132–148: जैन मुनि और आर्यिका संघ के कठोर नियम]।
10. **Skocpol, T. (1984).** *Vision and Method in Historical Sociology*. Cambridge University Press. [pp. 1–21: तुलनात्मक ऐतिहासिक विश्लेषण की पद्धति]।
11. **Thapar, R. (2003).** *Early India: From the Origins to AD 1300*. Penguin Books. [pp. 165–170: मौर्य और मौर्योत्तर काल में संघों को प्राप्त राजकीय संरक्षण]।